वीतरागतास्वरूप उत्तम आकिंचन धर्म

मंगलाचरण–

अंजुली जल सम जवानी क्षीण होती जा रही।
प्रत्येक पल जर्जर जरा नजदीक आती जा रही।।
काल की काली घटा प्रत्येक क्षण मडरा रही।
किन्तु पल–पल विषय तृष्णा तरूण होती जा रही।।

मंगलाचरण–

अहमेक्को खलु सुद्धो
दंसण णाण मइओ सदारूवी।
णवि अत्थि मज्झकिंचिवि
अण्णं परमाणुमिंतंपि।।

उत्तम आकिंचन धर्म की परिभाषा?

दश धर्मो का सार क्या है?

आकिंचन्य धर्म की विरोधी बतायें?

- न किंचन: इति अकिंचन: तस्यभाव: आकिंचन:। ज्ञानानंदस्वभावी आत्मा के अतिरिक्त कुछ भी मेरे नही है ऐसा जानना, मानना, और पर पदार्थो से विरक्त होना ही आकिंचन्य धर्म है।
- आकिंचन ब्रह्मचर्य धर्म दश सार हैं। चहुँगति दु:खतैं काढि मुकति करतार हैं।।
- आकिंचन्य धर्म की विरोधी परिग्रह है। परिग्रह किसे कहते हैं मूर्च्छा परिग्रह:, ममत्वपरिणाम: परिग्रह:।

परिग्रह के भेद बतायें ?

परिग्रह के भेद– आभ्यंतर 14 प्रकार का और बाह्य 10 प्रकार का परिग्रह

- आभ्यन्तर परिग्रह के भेद–मिथ्यात्व, क्रोध, मान, माया, लोभ, हास्य, रति, अरति, शोक, भय,जुगुप्सा,(ग्लानि) स्त्रीवेद, पुरूषवेद, नपुंसकवेद।
- बाह्य परिग्रह के भेद– क्षेत्र(खेत,प्लाट) वास्तु (निर्मित भवन) धन(चांदी,सोना, जवाहरात,मुद्रा) धान्य, द्विपद (मनुष्य, पक्षी) चतुष्पद (पशु) यान (सवारी) शय्यासन, कुप्य, भांड।

परिग्रह का स्वरूप बतायें?

- परिग्रह सबसे बडा पाप है तो आकिंचन्य सबसे बडा धर्म है।
- दुनियां रूपये, धन, मकान गाडी आदि को ही परिग्रह जानती है, मानती है, आभ्यंतर परिग्रह को नही।
- अंतरंग परिग्रह के त्याग बिना बाह्य परिग्रह का त्याग कार्यकारी नही।

परिग्रह का स्वरूप बतायें?

- परिग्रह में रूपया पैसा को मानेगें तो मनुष्यगति के अलावा किसी भी गति में रूपये का व्यवहार नही होता।
- पदार्थो का अभाव ही नही करना वरन उनके प्रति ममत्वभाव का भी त्याग करना है।
- हास्य परिग्रह है इसलिये मूर्ति को हसमुख कहना अवर्णवाद है।
- ममेदंबुद्धिलक्षणं परिग्रहः, परपदार्थ स्वयं परिग्रह नही है इनके प्रति ममत्वबुद्धि ही परिग्रह है।

परिग्रह का स्वरूप बतायें?

- अहमबुद्धि, कर्तृत्वबुद्धि, ममत्वबुद्धि, ही मिथ्यात्व है। यही बडा परिग्रह है इसको सबसे पहले छोडना चाहिये।
- पर को अपना मानने के त्याग के साथ तत्संबंधी राग के त्याग से मिथ्यात्व छूटता है। परिग्रह का त्याग करना है।
- यहां मुनियों की मुख्यता से कथन है तथा गृहस्थों को भी भूमिकानुसार परिग्रह का त्याग करना चाहिये।

परिग्रह का स्वरूप बतायें?

- परि अर्थात चारों ओर से ग्रह अर्थात गृहण करे, संचय करे, वह परिग्रह कहलाता है।
- रागद्वेष मोहादि मेरे नही हैं।
- मुक्ति के अभिलाषी को समस्त परिग्रह का त्याग करना चाहिये।
- मोहरागद्वेष भावों की उत्पति का नाम ही हिंसा है, परिग्रह है–
- अप्रादुर्भावः खलु रागादीनां भवत्यहिंसेति। तेषामेवोत्पति हिंसेति जिनागमस्य संक्षेपः।।

- संतोष भाव से दरिद्रता का अभाव– उदा. फकीर, एक पैसा, राजा जो दूसरे राजा से युद्ध करने जा रहा था, फकीर ने राजा पर पैसा फेंक दिया, जिसके मन में संतोष नही वह सबसे बडा गरीब है। राजा विरक्त हो गया। मोह माया में सुख मान रहा था ससे विरक्त हुआ
- भ्रम से संकट–उदा. सेठ, गेरू(लाल रंग) शौच को गया लाल रंग देखकर भ्रम से बीमार हो गया, कितना खून निकल गया, बच्ची द्वारा सही बात सुनने से भ्रम मिट गया। वैसे ही जीव अज्ञान अवस्था में भटक रहा है ज्ञान होते ही वैराग्य धारण कर लेता है।

▪भ्रम की मार– उदा. जैसे किसी ने बच्चे से कह दिया तेरा कान कौआ ले गया,बच्चा रोता हुआ इधर उधर भागता है, किसी सज्जन के समझाने पर शांत होता है वैसे ही यह जीव संसार के विषयों में सुख खोजता फिरता है, भटकता है, ज्ञानीजनों के सम्बोधन से ज्ञान होता है विषयों की संसार की असारता को छोडता हुआ आकिंचन धर्म की प्राप्ति करता है।

वीतरागता उत्तम आकिंचन धर्म – पं.कैलाश चन्द्र जैन शास्त्री

परिग्रह त्यागी की स्थिति बतायें ?

▪परिग्रह मुक्त राजा भरत–

ज्ञान कला जिनके घट जागी,
ते जगमाहीं सहज बैरागी।
ग्यानी मगन विषै सुखमाहिं,
यह विपरीत संभवै नाहीं।।

▪जैसे बच्चे रूठ जाते है किसी की नही सुनते वैसे ही विषयकषायों से रूठ जाओ, इन्द्रियों की मत सुनो।

कैसा चिंतन करना चाहिये ?

- मेरा स्वरूप देहवाला नही जाति, कुल,वर्ण वाला नही, मैं तो ज्ञायक हूँ।
- मेरा स्वरूप पुदगल वाला, इसकी पर्यायों वाला नही, मैं तो स्व से परिपूर्ण हूँ, अतीन्द्रिय हूँ।
- अपने ज्ञानदर्शन स्वरूप के बिना अन्य किंचित मात्र भी मेरा नही है, मैं किसी अन्य द्रव्य का नही, ऐसे अनुभव को आकिंचन कहते हैं।
- छंद–तन से जिनका ऐक्य नही,

हो सुत, तिय मित्रों से कैसे।
चर्म दूर होने पर तन से,
रोम समूह रहें कैसे।।

कैसा चिंतन करना चाहिये ?

- ज्ञानानंद स्वभावी आत्मा को जानना, मानना, रम जाना ब्रह्मचर्य है तो उससे भिन्न पर पदार्थो एवं उनके लक्ष्य से उत्पन्न होने वाले चिद् विकारों को अपना नही मानना, नही जानना, नही रमना आकिंचन धर्म है।
- जैसे समुद्र से नदी नही निकलती भले ही पानी का भंडार हो,(साकिंचन) पहाड से निकलती है भले पानी नही हो,(आकिंचन) वैसे हीकषायों से आकिंचन नही बना जाता।

कैसा चिंतन करना चाहिये ?

▪जगत के पदार्थ सुन्दर दिखते हैं, सु उपसर्ग, उन्दी क्लेदने धातु है अरच् प्रत्यय से बना है अर्थात् जो तडफा तडफा कर मारे, क्लेद करे, दुखी करे, ऐसे सुन्दर पदार्थ पर मत रीझो।

▪मन नपुंसकलिंग है इन्द्रियों के पीछे भागता रहता है।

▪जैसे आतिशी शीशे से कागज जल जाता है,वैसे ही इन्द्रिय, मन पर संयम हो तो आकिंचन धर्म की प्राप्ति होती है।

▪पाप के उदय से पापी नही होता है, ज्ञानियों को भी पाप का उदय आता है।

कैसा चिंतन करना चाहिये ?

▪अंतरंग शुद्धि होने से बहिरंग शुद्धि नियम से होती है।उदा. घडे के अंदर पानी हो तो बाहर गीला हो ही जाता है।

▪व्यसनमुक्त एवं सदाचार युक्त जीवन होने से जैनियों के पास संपति दिखाई देती है। लेकिन संपति के मोह में फंसते नही, इसीलिये दान करते हैं।

▪नास्तिरूप से आकिंचन्य अस्ति रूप से ब्रह्मचर्य धर्म

दशलक्षण पूजा का छंद–

परिग्रह चौबीस भेद, त्याग करैं मुनिराजजी।
तिसना भाव उछेद, घटती जान घटाईए।।

उत्तम आकिंचन गुण जानों, परिग्रह चिंता दुख ही मानों।
फॉस तनक सी तन में सालै, चाह लंगोटी की दुख भालै।।
भालैं न समता सुख कभी नर,बिना मुनि मुद्रा धरैं।
धनि नगन पर तन नगन ठाडे, सुर असुर पायनि परैं।।
घरमाहिं तिसना जो घटावैं, रूचि नहीं संसार सौं।
बहु धन बुरा हूँ भला कहिये, लीन पर उपगार सौं।।

पूजन के छंद का अर्थ– परिग्रह के चौबीस भेद हैं उनका त्याग(व्यवहार आकिंचन) मुनिराज करते हैं और तृष्णा भाव को नष्ट करते हैं(निश्चय आकिंचन) श्रावकों को भी धीरे–धीरे दोनों प्रकार के परिग्रह को घटाना चाहिए। उत्तम आकिंचन श्रेष्ठ गुण है, परिग्रह चिन्ता दुःख के ही पर्याय है छोटी सी फॉस भी पूरे शरीर को दुःखी कर देती है, उसी प्रकार लंगोंटी का आवरण या लंगोंटी की चाह दुःख को देने वाली होती है। यह मनुष्य महाव्रत अर्थात् निर्ग्रंथ दिगम्बर मुनि की मुद्रा को धारण किये बिना समता और सुख को प्राप्त नही कर सकते। वे मुनिराज धन्य हैं जो पर्वतों पर नग्न खडे रहकर तप करते है। उनके चरणों की पूजा सुर असुर आदि सभी करते हैं। घर में रहते हुए भी जो तृष्णा को घटाते हैं, तथा जिनकी रूचि संसार में नही है। ऐसे जीवों का धन यद्यपि बुरा ही होता है, परोपकार में लगने के कारण फिर भी अच्छा कहा गया है।

(6).उत्तम अाकिंचनः–

न किंचनः इति आकिंचनः तस्य भावः आकिंचनः! किंचनः कः ? परिग्रहः! कः परिग्रहः ? मूर्च्छा परिग्रहः, ममत्व परिणामः परिग्रहः! परिग्रहस्य कति भेदः ? द्वौ आभ्यन्तरवाह्यचेति! मिथ्यात्व, क्रोध, मान, माया, लोभ, हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद, पुरूषवेद, नपसंकवेद !

वाह्य परिग्रहः दशधाः– क्षेत्र(खेत,प्लाट)वास्तु(निर्मितभवन)धन (चांदी, सोना, जवाहरात,मुद्रा) धान्य, द्विपद (मनुष्य, पक्षी) चतुष्पद (पशु) यान (सवारी) शय्यासन, कुप्य, भांड। पहले अंतरंग परिग्रह का त्याग होता है फिर बाह् परिग्रह का। बाह्य परिग्रह का त्याग भावों की शुद्धि के लिए किया जाता है परन्तु रागादि भाव रूप आभ्यन्तर परिग्रह के विना वाह्य परिग्रह का त्याग निष्फल है। पर पदार्थ के छूटने से कोई अपरिग्रही नहीं होता,बल्कि उसके रखने का भाव उसके प्रति एकत्व बुद्धि या ममत्व परिणाम छोडने से परिग्रह छूटता है। आत्मा तो अपरिग्रही अर्थात् आकिंचन धर्म का धनी है।

जय जिनेंद्र

पं.कैलाश चन्द्र जैन शास्त्री
जैनदर्शनाचार्य,से.नि. सहा.निदेशक
14/214 मुक्ताप्रसाद नगर
बीकानेर राज.9460674306